भारतीय लोक–गीतों में संकीर्तन की परम्परा

डा० जया शर्मा
एसोसिएट प्रोफसर, संगीत विभाग
आर्य कन्या पीजी कालेज
हापुड़

लोक संगीत अपनी सहजता और सरलता के कारण प्राचीन काल से ही भारतीय जन–मानस में अत्यन्त लोकप्रिय रहा है। कहा जाता है कि आदि मानव को जब भाषा का ज्ञान भी नही था तब भी लोक संगीत विद्यमान था और आदि मानव भाषा के अभाव में विभिन्न ध्वनियॉ द्वारा ही अपने मनोभावों को प्रकट करते थे। 'लोक संगीत' की परम्परा आदि, असीम व अनन्त है। इसके अभाव में सम्पूर्ण जगत ही नीरस प्रतीत होता है। भारतय लोक संगीत भारतीय संस्कृति का सुखद संदेश देने वाली कला है। इतिहास, धर्म, पुराण दर्शन, उत्सव आदि प्रत्येक क्षेत्र में हमारा लोक संगीत पूर्ण रूपेण परिलक्षित होता है।

लोक संगीत में भारत की आत्मा बसती है। प्राचीन काल से ही भारत में लोक संगीत की एक सुदृढ, अति सुन्दर परम्परा रही है। लोक संगीत के अन्तर्गत लोक गीत, लोक वाद्य तथा लोक नृत्य साधारण जनमानस को प्रारम्भ से ही सम्मोहित करते रहे हैं। लोक संगीत भारतीय संस्कृति की अनूठी धरोहर है। लोक संगीत की परम्परा भारत में बड़ी प्राचीन है। सृष्टि के आरम्भ से इसकी परम्परा रही है। प्राचीय साहित्य के लोक संगीत के अन्तर्गत विभिन्न गाथाओं का उल्लेख स्थान–स्थान पर मिलता है। वैदिक युग के पश्चात् महाकाव्य तथा पौराणिक युग में भी लोक संगीत के विकास की परम्परा परिलक्षित होती है। अतः कह सकते है कि प्राचीय काल में लोक संगीत की परम्परा पूर्ण रूप से पुष्पित एवं पल्लवित हुई।

''हृदय की अनुभूतियॉ तरंगित होकर जब प्रकृति के मध्य

बहने लगती है, तो लोक संगती का जन्म होता है'' निराला

भारतीय गीत साहित्य में लोक गीतों का विशिष्ट स्थान है। धर्म–प्राण भारतीय परिवारों में स्त्रियों के लोकगीत बड़े मांगलिक तथा संकीर्तन गरिमा से युक्त है। जैसे हरिनाम स्मरण से किसी भी मंगल कार्य का आरम्भ होता है, वैसे ही कोई भी मांगलिकय संस्कार लोकगीत से आरम्भ होता है। ये लोकगीत एक प्रकार से शास्त्रीय कर्म–काण्डों की प्रतिध्वनि है। इन गीतों के संकीर्तन के विविध रूप प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रतिबिम्बित होते है। अतः ये संकीर्तन की परिसीमा के भीतर है। लोक–गीतों के विभिन्न वर्ग है। विभिन्न संस्कार परक गीत –यथा सोहर, मुण्डन गीत, यज्ञोपवतीत गीत, नहदू तथा विवाह आदि के गीत है। इसी प्रकार नचारी, वन्दना गीत, लीला गीत तथा कथा गीत भी है। इन गीतों में भी सबका अलग–अलग स्थान है और अपना अलग–अलग महत्व भी। इनकी लोकमान्यता और महत्व को परखने के लिए, इनके भीतर संकीर्तन के विविध रूपों के परिदर्शन के लिए संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत है।

गीत भगवान नाम की तरह मंगलवाचक, वेद–मन्त्रों की तरह स्वस्तिवाचक तथा समस्त विघ्नों के उपशामक माने जाते हैं। इन गीतों में नाना विध संस्कार और उनकी सम्पन्नता के विधि–निषेधो, विधानों और उपकरणों का वर्णन है। ये गीत वैदिक मन्त्रों के सहचर जैसे हैं पंडित से मन्त्र भले ही छूट जाए, पर गीतों पर विधि और विधान के संकेत नहीं छूट पाते। संस्कारपरक गीतों में पहला है–सोहर। यह जन्मकाल का गीत है। परिवार में शिशु के जन्म–ग्रहण का संकेत पाकर नारी का सहज आनन्द विहल हृदय हर्षातिरेक से गद्‌गद् हो जाता है और उसके कोकिल–कण्ठ सहज ही गुनगुना उठते हैं–सोहर के गीतों में। सोहर के अधिकांश गीत श्री राम और कृष्ण के जन्मोत्सव का चित्र उपस्थित करते है। मुण्डन के गीतों में बालक के केश–विन्यास, शोभा तथा केश काटने के अनेकविध नियमों का वर्णन मिलता है। इसी प्रकार यज्ञोपवीत के गीतों में जनेऊ के लिए बटुक की उत्सुकता, परिवार की विहलता और विधि का वर्णन प्राप्त होता है। नहदू की भी यही परम्परा है विवाह सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार है। इसमें वर श्रीराम या शिव के रूप में तथा वधू सीता या पार्वती के रूप में चित्रित होते है। वैवाहिक गीतों में वर–वधू की शोभा, झॉकी और हास–परिहास का संजीव चित्र मिलता है। इन गीतों में भिन्नतओं के होते हुए भी एक बात की समता दिखती है कि ये सारे गीत प्रतीकात्मक है। प्रतीक कही श्री राम का, कही श्री कृष्ण का, कहीं शिव का, कही सीता का, कही सती का हो कहीं पार्वती का है। एक–एक वर श्री राम है और एक–एक वधू श्री सीता। सीता राम का ऐसा साधारणीकरण लोकगीतों के सिवाय अन्यत्र कहॉ उपलब्ध है? इन गीतों में ब्रहम का साधारणीकरण है। अतएव इनका आध्यात्मिक महत्व है। संस्कारपरक ये सारे लोक–गीत लौकिक रूप लेते हुए भी परब्रहम के लीला–ब्रहम(सगुण) के लीलागान है।

संस्कार–गीतों की कोटि से हटकर 'विविध' वर्ग के भीतर आने वाले लोक–गीतों का भी बहुत प्रचलन है। इन गीतों में कुछ तो स्तवन है और कुछ कुलदेवता–वन्दना। मिथिलांचय में इन्हें 'गोसाई–गीत' या गोसाई निकगीत कहते है। आरम्भ में कुलदेवता के गीत गाए जाने हैं इन गीतों में देवता या देवी के पराक्रम का वर्णन होता है। तथा यज्ञ के निर्विघ्न समापन के लिए याचना होती है। ऐसे गीत विशुद्ध रूप से संकीर्तन है। लगभग समस्त आंचलिक भाषाओं में

विशुद्ध कीर्तन के रूप स्पष्ट हैं ये कीर्तन पुरूष वर्ग के बीच प्रख्यात तो है ही, लोकगीतों में विस्तार से हैं इन गीतों में ही भगवान से सुयश, कही लीला, कही पराक्रम का वर्णन प्राप्य है। विशेषतया विवाह संबधी कार्यव्यापारों और झॉकियों का उल्लेख मिलता है। ये गीत मुख्य रूप से विवाह–कीर्तन के नाम से प्रचलित है। और भगवान के माधुर्य रूप का वर्णन प्रस्तुत करते हैं सखी–सम्प्रदाय के साधुओं के बीच इस प्रकार के माधुर्यपूर्ण लोकगीत विशेष प्रचलित है। मिथिला की महिलाओं में वैवाहिक कीर्तन का विशेष स्थान है।

नचारी भी संकीर्तन का एक अनोखा रूप हौै। नचारी में कही शिव का विकट रूप वर्णन है तो कहीं लीला–वर्णन। कहीं उनका उपहास है तो कही परिहास। पारिवारिक नोक–झोक, दैन्य, विकट–परिवार, विषम स्थिति आदि का बड़ा ही मर्मभेदी, पर रोचक वर्णन नचारी का विषय होता है। नचारी अन्यतम रूप से शिव लीला–गान है, शिव कीर्तन है यह लोक साहित्य की महान उपलब्धि है–

माइ हे सुनह लछियन शिव औता रथ पर।

माइ हे देखइछि ऐ न बूढ़ बरद पर।।

लोक गीतों में लीला गीत भी होते हैं ये कथा–गीतों से अधिक आकर्षक और लोक–रूचि के अनुकूल पड़ते है। इनमें भगवान की लीला–विशेष का भंगिमा पूर्ण चित्रण होता है। उदाहरण स्वरूप नाग लीला, दधि लीला आदि का जो साहित्यिक स्वरूप उपलब्ध है, लोक गीतों में तद् विषयक लीलाएॅ गेय रूप में प्राप्य है। ये गीत लीला गीत है और स्पष्ट रूप से संकीर्तन से सादृश्य रखते हैं । अतः ये भी संकीर्तन के रूप ही हैं।

कीर्तन के दो रूप देखे जाते है–सम्यक और सामवेतिक। सम्यक रूप का प्रचलन कम है, जिसके आचार्य है श्री नारद और श्री हनुमान। समवेतरूप वाले कीर्तन को ही मुख्य रूप से कीर्तन कहा जाता है। लोक–मान्यता में इसी का स्थान है। इसमें अनेक लोग एक साथ कीर्तन करते है। सम्प्रति समाज में कीर्तन का जो रूप प्रचलित है, वह है वाद्य–ध्वनियुक्त भगवान के नाम, रूप, लीला और ऐश्वर्य का सामूहिक गायन।

इन लोकगीतों में बहुतेरे तो कीर्तन मान लिए गए है और हैं भी शेष को भी लोकसमादर प्राप्त है। संकीर्तन का जो सर्वमान्य रूप प्रचलित है, यह सारा–का–सारा यथावत् लोक–गीतों में उपलब्ध है। कहीं वन्दना है तो कहीं लीला–गान, कही गुण–कथन है तो कहीं रूप वर्णन। सबसे बड़ी बात यह है कि ऐश्वर्य या माधुर्य का गायन जो लोक–गीत प्रस्तुत करता है, जो रूझान और तन्मयता लोक–गीत–कीर्तन से प्राप्त होती है, वह अनूपमेय है। नाम के कृत्रिम घेरे से हटकर यदि कीर्तन और लोक–गीतों पर दृष्टिपात किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है। कि कुछ को छोड़कर शेष लोकगीत संकीर्तन–वर्ग के हैं और लोकगीत के और लोकगीत के रूप में ही उन्हें विशेष गरीमा, लोकप्रियता, महत्व और अनिवार्यता प्राप्त है। ये गीत सामान्य जनता के हृदय में भक्ति और श्रृद्धा का संचार तो करते ही है साथ ही भक्त प्रवरों को भी आकृष्ट करते हैं। भक्त शिरोमणि तुलसीदास जी की रंचना 'जानकी मंगल', 'पार्वती मंगल तथा 'राम–कानहटू' इन्ही लोकगीतों से अनुप्राणित है और उन्हीं में निहित भावनाओं के साहित्यिक स्वरूप है। लोक–गीत का 'सोहर' भक्तवर सूरदास जी के काव्य का 'सोहिलो' बन गया। प्राम्यगीत का नाम नारी–कण्ठ से निःसृत होकर तुलसीदार जी का 'वरवै' बन गया।

गाम्य–गीतों की, लोकगीतों की सम्भावनाएॅ युग के साथ उभरती आ रही हैं। वह दिन दूर नही जग लोक–गीत अपने भीतर के संकीर्तन के विविध रूप को पूर्वाग्रहतिमिर प्रसित समाज की ऑखों में आलोकित कर देगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

निबंध जगत–लक्ष्मी नारायण गर्ग

कल्याण अंक–डा0 श्री शुकदेव राज जी

संगीत पंत्रिका–लोकगीत अंक(हाथरस)

भारतीय संगीत की परम्परा (मंजरी जोशी)

संस्कार–पत्रिका (सर्वेश अस्थाना)